मुख्य न्यायमूर्ति बिनोद कुमार रॉय, और न्यायमूर्ति एन.के. सूद,

कोर्ट अपने स्वयं के प्रस्ताव पर, -अपीलकर्ता

बनाम

अजय बंसल और अन्य -प्रतिवादी / अवमाननाकर्ता

सी.ओ.सी.पी. 2003 कि संख्या 15

11 फ़रवरी 2004

भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद 215—न्यायालय अवमानना अधिनियम, 1971—धारा 12—उच्च न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा शपथ लेने के दो साल बाद न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में दो समाचार पत्रों में समाचारों का प्रकाशन—न्यायाधीश की नियुक्ति को बदनाम करने का प्रयास जिससे उन्हें आम जनता की नजरों में बदनाम किया जा सके—एक लंबे समय से वकील ने भी कानूनी नोटिस जारी कर नियुक्ति को चुनौती दी है - समाचार पत्रों में मूल रिकॉर्ड के आधार पर तथ्यात्मक स्थिति के विपरीत रिपोर्ट प्रकाशित की गई है - रिपोर्ट स्पष्ट रूप से रिपोर्टर द्वारा व्यक्त की गई एक राय है - रिपोर्टर अपने पास मौजूद किसी भी सामग्री का उल्लेख करने में विफल रहा है, राष्ट्रपति द्वारा न्यायाधीश के नाम को अस्वीकार करने के संबंध में बयान को सही ठहराएं - समाचार आइटम न्यायाधीश की छवि को धूमिल करने का एक सुविचारित प्रयास है - न्यायालय की आपराधिक अवमानना करने का दोषी - नोटिस जारी करने में वकील की कार्रवाई न्यायपालिका को डराने का प्रयास है और इसके स्वतंत्र कामकाज में हस्तक्षेप करें - उनकी ओर से ऐसी कार्रवाई निंदनीय है - अदालत की आपराधिक अवमानना करने का भी दोषी ठहराया गया - अधिवक्ता को कठोर और असंयमित भाषा के इस्तेमाल के लिए माफी मांगनी पड़ी - अधिवक्ता पर भविष्य में सावधान रहने की चेतावनी देते हुए 2000 रुपये का जुर्माना लगाया गया - ए.जे. फिलिप के मामले में पूर्ण पीठ के निर्णय के संदर्भ में अवमाननाकर्ताओं 3 से 5 द्वारा प्रस्तुत की गई बिना शर्त और अयोग्य माफी स्वीकार की गई। समान शर्तों के अधीन।

निर्धारित किया गया कि दोनों समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचार केवल सामान्य रूप से न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रणाली के बारे में राय की अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि न्यायमूर्ति गोयल की छवि को धूमिल करने का एक सुविचारित प्रयास है। सामान्य पाठक को यह संदेश देने की कोशिश की गई है कि एक बेईमान व्यक्ति को केवल इसलिए न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया है क्योंकि उसका आरएसएस के वकील विंग से राजनीतिक जुड़ाव है। एक आम पाठक के लिए यह उद्देश्य न केवल कानून मंत्री या सरकार को जिम्मेदार ठहराया जाएगा, बल्कि इस न्यायालय और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कॉलेजियम और सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश को भी जिम्मेदार ठहराया जाएगा जिनसे इस मामले में परामर्श लिया गया था।

(पैरा 19)

आगे कहा गया कि हम श्री अजय बंसल द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण से संतुष्ट नहीं हैं। वह लंबे समय से वकील होने और कानून के प्रावधानों से अच्छी तरह वाकिफ होने का दावा करते हैं। वह रिट याचिका दायर करने जैसे अपने संवैधानिक अधिकारों से परिचित होने का भी दावा करता है। इसलिए, वह किसी न्यायाधीश को हटाने की संवैधानिक प्रक्रिया से अनभिज्ञ होने का दावा नहीं कर सकते। वह जानते थे कि किसी न्यायाधीश को न तो भारत के राष्ट्रपति द्वारा और न ही भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा हटाया जा सकता है। इन परिस्थितियों में, उन्हें एक न्यायाधीश को हटाने या फिर रिट याचिका का सामना करने के लिए कानूनी नोटिस भेजना, न्यायपालिका पर दबाव डालने और उसके स्वतंत्र कामकाज में हस्तक्षेप करने के प्रयास के अलावा और कुछ नहीं है। इसी प्रकार एक माननीय न्यायाधीश को 'कथित न्यायाधीश' के रूप में वर्णित करना एक न्यायाधीश के रूप में उनकी छवि

को धूमिल करने का प्रयास है। इस प्रकार, यह केवल असंयमित और कठोर भाषा के उपयोग का मामला नहीं है, बल्कि विशेष रूप से एक माननीय न्यायाधीश और समग्र रूप से न्यायपालिका की छवि को धूमिल करने का उनका एक सोचा-समझा प्रयास है। इस प्रकार, हमारा यह विचार है कि वह न्यायालय की गंभीर अवमानना करने के भी दोषी है।

(पैरा 24-ए)

श्री सूर्यकांत, महाधिवक्ता, हरियाणा, श्री रणधीर सिंह, वरिष्ठ उप महाधिवक्ता, हरियाणा, अपीलकर्ता के लिए न्याय मित्र।

आर.एस. बैंस, अवमाननाकर्ता क्रमांक 1 के लिए, अधिवक्ता।

आर.एस. चीमा, वरिष्ठ अधिवक्ता, के.एस. के साथ। के. एस. नलवा कंटेम्पनर नंबर 2 और 3 के लिए।

एम.एल. सरीन, वरिष्ठ वकील, सुश्री स्वीना पन्नू, वकील के साथ, अवमाननाकर्ता संख्या 4 और 5 के लिए।

निर्णय

न्यायधीश एन के सूद,

यह अवमानना कार्यवाही टाइम्स ऑफ इंडिया (चंडीगढ़ संस्करण) दिनांक 8 मई, 2003 और हरिभूमि दिनांक 9 मई, 2003 में प्रकाशित समाचारों और भारत के महामहिम राष्ट्रपति, माननीय को संबोधित एक कानूनी नोटिस से उत्पन्न हुई है। भारत के मुख्य न्यायाधीश और हमारे उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री आदर्श कुमार गोयल, श्री अजय बंसल, अधिवक्ता (आदेश संख्या 1) द्वारा।

(2) दिनांक 8 मई 2003 के समाचार पत्र टाइम्स ऑफ इंडिया (चंडीगढ़ संस्करण) में निम्नलिखित समाचार प्रकाशित हुआ था:—

> "सरकार ने उच्च न्यायालय के न्यायाधीश पर आईबी की रिपोर्ट को नजरअंदाज कर दिया
>
> अक्षय मुकुल द्वारा
>
> टाइम्स न्यूज नेटवर्क।
>
> नई दिल्ली : डीडीए घोटाले में कथित संलिप्तता के लिए दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश शमीत मुखर्जी की गिरफ्तारी के बाद कानून मंत्री अरुण जेटली ने नियुक्तियों में पारदर्शिता सुनिश्चित करने और न्यायाधीशों द्वारा अनुचित व्यवहार के मामलों की जांच करने के लिए कानून बनाने में तेजी लाई है।
>
> हालाँकि, 2001 में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति पर टाइम्स ऑफ इंडिया के पास उपलब्ध दस्तावेज़ बताते हैं कि केंद्रीय कानून मंत्री स्वयं उम्मीदवारों की ईमानदारी के बारे में इंटेलिजेंस ब्यूरो द्वारा उठाए गए सवालों को नजरअंदाज करने के इच्छुक रहे हैं। मामला मई, 2001 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश आदर्श कुमार गोयल की नियुक्ति का था।
>
> उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति निम्नलिखित प्रकार से की जाती है: राज्य सरकार राज्यपाल के माध्यम से नामों की एक सूची सर्वोच्च न्यायालय और संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीशों को भेजती है। फिर यह सूची कानून मंत्रालय को भेजी जाती है, जो नामांकित व्यक्तियों पर आईबी रिपोर्ट प्राप्त करता है। इसके बाद, यह तीन मानदंडों के साथ एक मैट्रिक्स तैयार करता है- व्यावसायिक क्षमता, ईमानदारी और राजनीतिक संबंध।

गोयल के मामले में, कानून मंत्रालय के मैट्रिक्स में 'पेशेवर क्षमता कॉलम' के तहत कोई प्रविष्टि नहीं है, जबकि प्रतिष्ठा/ईमानदारी' कॉलम स्पष्ट रूप से कहता है: "भ्रष्ट व्यक्ति"। उनकी बाद की नियुक्ति की कुंजी राजनीतिक संबद्धता कॉलम की सूची में प्रतीत होती है, जिसमें लिखा है कि गोयल आरएसएस की वकील शाखा, एयू-इंडिया अधिवक्ता परिषद के महासचिव थे। दिलचस्प बात यह है कि जिन पांच लघु-सूचीबद्ध अधिवक्ताओं की ईमानदारी पर आईबी ने सवाल उठाए थे, उनमें से केवल वही एक थे जिन्हें मंत्रालय ने बरी कर दिया था।

लेकिन उनकी नियुक्ति से पहले, एक बड़ी बाधा थी: गोयल का नाम, चार अन्य लोगों के साथ, के आर नारायणन की मंजूरी के लिए गया, जो उस समय राष्ट्रपति थे।

जबकि नारायणन ने एम.के. की नियुक्ति को मंजूरी दे दी। मित्तल ने पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के अतिरिक्त न्यायाधीश के रूप में गोयल सहित तीन अन्य लोगों के बारे में टिप्पणियां कीं और फाइल कानून मंत्रालय को लौटा दी। हालाँकि, मंत्री अरुण जेटली ने इस सिफ़ारिश का बचाव किया। 19 मई, 2001 को एक गोपनीय नोट में, जेटली ने गोयल की ईमानदारी पर आईबी के निष्कर्ष को 'अपमानजनक' बताते हुए खारिज कर दिया, उन्होंने कहा कि उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय कॉलेजियम दोनों ने उन पर पुनर्विचार किया था।

उन्होंने मुख्य न्यायाधीश और पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय कॉलेजियम के सदस्यों के हवाले से दोहराया कि गोयल की "एक ईमानदार और ईमानदार वकील होने की त्रुटिहीन प्रतिष्ठा है।" 21 मई 2001 को, प्रधान मंत्री वाजपेयी ने अपने हस्ताक्षर किए और फ़ाइल फिर से नारायणन के पास चली गई।

राष्ट्रपति ने नोट किया: "फिर भी, मुझे लगता है कि कार्रवाई का एक अधिक वांछनीय तरीका उसी प्रक्रिया का पालन करना होगा जैसा कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के समान रूप से रखे गए मामले में किया गया था जहां मुख्य न्यायाधीश की सलाह, जो कि का अभिन्न अंग है चयन प्रक्रिया, दोबारा मांगी गई और विधिवत प्राप्त हुई.....1 भी होगी अगर इस मामले पर 3 मई, 2001 की मेरी पिछली टिप्पणियों के साथ मेरी त्वरित टिप्पणियाँ भारत के मुख्य न्यायाधीश के साथ साझा की जाती हैं, तो मैं आभारी हूँ।"

3) कुछ इसी तरह का समाचार 9 मई, 2003 के समाचार पत्र हरिभूमि में प्रकाशित हुआ था, जो निम्नानुसार है

"जब हाई कोर्ट जज की नियुक्ति पर राष्ट्रपति ने नाराजगी जताई"

नई दिल्ली-दिल्ली हाई कोर्ट के जज शमित मुखर्जी की गिरफ्तारी और डी.डी.ए. घोटाला में उनकी भागीदारी के बाद केंद्रीय कानून मंत्री अरुण जेटली कोशिश में लग गए हैं कि जजों की नियुक्ति में पारदर्शिता हो और इस के लाइव वेधेयक लाया जाए। इस बीच कुछ ऐसे प्रमाण सामने आए हैं कि जजों की नियुक्ति के लिए इंटेलीजेंस ब्यूरो द्वारा जो रिपोर्ट भेजी गई थी, उसे देखने के लिए मुख्य नियुक्ति की गई थी। मई, 2001 में पंजाब-हरियाणा हाई कोर्ट के जज के पद पर आदर्श कुमार गोयल की नियुक्ति हुई थी। इस पद पर नियुक्ति की प्रक्रिया यहां के राज्य सरकार द्वारा राज्यपाल के माध्यम से सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश तथा उच्च न्यायालय को नमोन का दंड भेजा जाता है। याह पैनल छानबीन के लिए इंटेलिजेंस ब्यूरो को भेजा जाता है। आई.बी. तीन मुद्दो पर अपनी टिप्पनी भेजता है। एक मुद्दा राजनीति संचलन का भी रहता है। गोएल के लिए टिप्पनी में "भ्रस्त व्यक्ति" लिखा गया था। विस्तार से यह पता लगा कि गोयल अखिल भारतीय अधिवक्ता परिषद के महामन्त्री थे जो आर.एस.एस. कि एक शाखा है, मगर मंत्रालय ने इसी नाम को क्लियर कर दिया। जब फाइल राष्ट्रपति भवन गई तो राष्ट्रपति के.आर. नारायणन ने सख्त जज के पद के लिए एम.के. मित्तल का नाम मंजूर कर लिया मगर गोयल के नाम को ठुकरा दिया। फाइल वापस कानून मंत्रालय वापस भेज दी गई और अरुण जेटली ने उनका बचाव किया। गोयल के प्रति आई.बी. द्वारे की गई तिप्पनी को अरुण जेटली ने अपमानजनक निरूपित किया। फाइल मेन अरुण जेटली ने उनेह इमानदार जज लिखा। जेटली का ये नोट 19 मई को लिखा

गया। क्या सिफ़ारिश पर दो दिन खराब हैं 21 मई को प्रधानमंत्री ने हस्ताक्षर करके फाइल दोबारा राष्ट्रपति भवन भेज दी। चुनकी ये फ़ाइल प्रधानमंत्री कार्यालय से दुबारा राष्ट्रपति कुंजी पास भेजी गई थी अत: राष्ट्रपति हमारे पास हस्ताक्षर कुंजी के लिए बढ़िया थे।"

(4) श्री अजय बंसल, अधिवक्ता द्वारा दिनांक 19 मई, 2003 को भेजा गया कानूनी नोटिस इस प्रकार है:-

"श्री अजय बंसल एडवोकेट के कार्यालय से, 193, लाजपत नगर, हिसार।

को

1. भारत के राष्ट्रपति नई दिल्ली।

2. मुख्य न्यायाधीश, भारत का सर्वोच्च न्यायालय, नई दिल्ली।

3. श्री आदर्श कुमार गोयल, कथित न्यायाधीश पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़।

विषय: कानूनी सूचना।

आदरणीय महोदय,

मैं उपरोक्त अधिवक्ता के रूप में अपनी ओर से आपको निम्नलिखित कानूनी नोटिस प्रदान करता हूँ।

1. यह कि मैं पिछले लगभग 21 वर्षों से भारत के हरियाणा राज्य के विभिन्न स्टेशनों पर वकील/सरकारी वकील का अभ्यास कर रहा हूँ क्योंकि मैं हिसार, हरियाणा (भारत) का निवासी हूँ।

2. 9 मई, 2003 को मैंने उत्तर भारत के एक प्रमुख समाचार पत्र, जिसे हरिभूमि के नाम से जाना जाता है, में प्रकाशित निम्नलिखित समाचार पढ़ा। समाचार इस प्रकार प्रकाशित किया गया है:

(हरिभूमि में प्रकाशित समाचार जैसा कि पहले ही पुनरुत्पादित किया जा चुका है, हिन्दी में पुनरुत्पादित है)।

3. उपरोक्त समाचार को पढ़ने से पता चलता है कि हमारे सिस्टम में कितनी गिरावट है। उल्लेख है कि श्री ए.के. की नियुक्ति. गोयल को उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के पद पर आपके कार्यालय द्वारा संसद के विधेयक के माध्यम से नहीं भेजा गया था। अतः यह स्पष्ट है कि श्री ए.के. की नियुक्ति प्रश्नगत है। गोयल भारत के लोकतंत्र के दुरुपयोग और बलात्कार के अलावा कुछ नहीं हैं। उक्त नियुक्ति श्री ए.के. हाईकोर्ट के न्यायिक अधिकारी के पद पर गोयल की नियुक्ति पूरी तरह से अवैध, असंवैधानिक और शर्मनाक है।

अत: इस नोटिस के माध्यम से आपसे श्री ए.के. की नियुक्ति रद्द करने का अनुरोध किया जाता है। गोयल को इस नोटिस की प्राप्ति के एक महीने के भीतर हमारे देश भारत के हित में सभी परिणामी प्रभावों के साथ उच्च न्यायालय के न्यायिक अधिकारी के पद पर नियुक्त किया जाएगा, ऐसा न करने पर मैं भारत के शीर्ष न्यायालय में क्वारंट रिट याचिका दायर करने के लिए बाध्य हो जाऊंगा।

दिनांक: 19 मई, 2003

हस्ताक्षर/-

अजय बंसल एडवोकेट

193, लाजपत नगर, हिसार।"

(5) न्यायालय का पूर्व दृष्टिकोण: - इस न्यायालय ने यह विचार किया कि यह धारणा देने की कोशिश की गई थी कि इंटेलिजेंस ब्यूरो की रिपोर्ट पवित्र थी या श्री न्यायमूर्ति गोयल से संबंधित अंतिम शब्द थी। यह,

जाहिर है, सही नहीं था। रिपोर्ट की सत्यता पर इस न्यायालय के कॉलेजियम और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी विचार किया गया और स्वीकार नहीं किया गया। इस न्यायालय का प्रथम दृष्टया विचार था कि श्री न्यायमूर्ति गोयल द्वारा इस न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में शपथ लेने के दो साल बाद इस तरह की खारिज की गई रिपोर्ट को देर से प्रकाशित करके और उनकी नियुक्ति को चुनौती देकर - कानूनी नोटिस के माध्यम से, दो समाचार पत्रों ने और श्री अजय बंसल, अधिवक्ता, ने श्री न्यायमूर्ति गोयल, इस न्यायालय के कॉलेजियम और भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अलावा माननीय न्यायाधीश के न्याय प्रशासन को बदनाम करने और बदनाम करने का प्रयास किया था। सर्वोच्च न्यायालय, जिसकी राय श्री न्यायमूर्ति गोयल की पदोन्नति की सिफारिश करते समय ली गई थी, ने उन सभी को, प्रथम दृष्टया, न्यायालय की आपराधिक अवमानना का दोषी ठहराया। तदनुसार, भारत के संविधान के अनुच्छेद 215 के तहत स्वत: संज्ञान शक्तियों का प्रयोग करते हुए, निम्नलिखित व्यक्तियों को नोटिस जारी करने का आदेश दिया गया था: -

> "(i) श्री अजय बंसल, अधिवक्ता, निवासी मकान नंबर 193, लाजपत नगर, शहर और जिला हिसार (राज्य-हरियाणा)।
>
> (ii) श्री दविंदर बालियान, समाचार पत्र हरिभूमि के प्रकाशक।
>
> (iii) कैप्टन अभिमन्यु सिंधु, समाचार पत्र हरिभूमि के मुद्रक।
>
> संख्या (ii) और (iii) सी/ओ हरि भूमि कॉम्प्लेक्स, पावर हाउस के पास, मॉडल टाउन, शहर और जिला रोहतक (राज्य-हरियाणा)।
>
> (iv) श्री बलराज अरोड़ा, 'द टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रिंटर और प्रकाशक, एससीओ नंबर 72-75, सेक्टर 8-सी, मध्य मार्ग, चंडीगढ़, 'टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस', प्लॉट नंबर 254-57, फेज़ II, औद्योगिक क्षेत्र, पंचकुला (राज्य-हरियाणा); और
>
> (v) श्री अक्षय मुकुल, टाइम्स ऑफ इंडिया के रिपोर्टर सी/ओ 'टाइम्स ऑफ इंडिया प्रेस', प्लॉट नंबर 254-57, चरण II, औद्योगिक क्षेत्र, पंचकुला (राज्य-हरियाणा)।
>
> (5.1) भारत सरकार के न्याय मंत्रालय को उसके अवर सचिव के माध्यम से श्री न्यायमूर्ति गोयल की नियुक्ति से संबंधित प्रासंगिक रिकॉर्ड एक सीलबंद कवर में हमारे अवलोकन के लिए प्रस्तुत करने के लिए नोटिस भी जारी किया गया था।

(6) श्री अजय बंसल, अधिवक्ता, ने अपने हलफनामे में प्रस्तुत किया है कि उनके पास माननीय श्री न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल के खिलाफ कुछ भी व्यक्तिगत नहीं है, जिन्हें वह व्यक्तिगत रूप से नहीं जानते हैं। उन्होंने आगे कहा है कि उनके पास जस्टिस गोयल के पक्ष या विपक्ष में कोई जानकारी नहीं है। उनके अनुसार, उनके द्वारा जारी किया गया कानूनी नोटिस दिनांक 19 मई, 2003 अखबार की रिपोर्ट में बताई गई परेशान करने वाली जानकारी से प्रेरित था। उन्होंने स्पष्ट किया है कि प्रकाशित जानकारी ने आम जनता के मन में उच्च न्यायालय के एक मौजूदा न्यायाधीश के बारे में संदेह पैदा कर दिया है और इससे संस्थान को नुकसान हो सकता है और लंबे समय से वकील होने के नाते, उन्होंने केवल सच्चाई का पता लगाने के लिए कानूनी प्रक्रिया शुरू की है। उनका ईमानदारी से मानना था कि जनता के मन से संदेह के बादल दूर होने चाहिए और सत्य की जीत होनी चाहिए। श्री बंसल के अनुसार, उन्होंने केवल एक सार्वजनिक कर्तव्य निभाया था और अच्छे विश्वास के साथ अपने लिए उपलब्ध संवैधानिक उपायों की सहायता लेने का प्रयास किया था। उन्होंने आगे कहा है कि उन्होंने कोई भी जानकारी प्रकाशित नहीं की है बल्कि केवल प्रकाशित जानकारी पर कार्रवाई की है। हालाँकि, श्री बंसल ने 'कड़वी' भाषा का प्रयोग स्वीकार किया है, उन्होंने इसके लिए न्यायपालिका में भ्रष्टाचार के अपने पिछले अनुभवों और ऐसे अनुभवों से उन्हें हुई मानसिक परेशानी को जिम्मेदार ठहराया। उन्होंने माना कि नोटिस में उनके द्वारा इस्तेमाल

की गई भाषा अनावश्यक रूप से कठोर और अनावश्यक लग रही थी और इसलिए, उन्होंने नोटिस में असंयमित भाषा के इस्तेमाल के लिए बिना शर्त माफी मांगी है।

(7) श्री देवेन्द्र बालियान, अवमाननाकर्ता संख्या 2, ने अपने संक्षिप्त हलफनामे में बताया है कि ऐसा प्रतीत होता है कि नोटिस उन्हें इस धारणा के तहत जारी किया गया था कि वह हिंदी दैनिक हरिभूमि के प्रकाशक हैं जो सही नहीं है। उन्होंने बताया है कि श्री अभिमनु, अवमाननाकर्ता नंबर 3, अखबार के मुद्रक और प्रकाशक थे। हालाँकि, उन्होंने कहा है कि वह न्यायालय और न्यायपालिका का बहुत सम्मान करते हैं। उन्होंने बिना शर्त माफ़ी भी मांगी है यदि उनके कारण हुए किसी भी कृत्य या चूक से न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप पाया जाता है।

(8) श्री अभिमनु, अवमाननाकर्ता संख्या 3, ने बताया है कि 8 मई, 2003 को व्यापक रूप से प्रसारित अंग्रेजी दैनिक टाइम्स ऑफ इंडिया में "सरकार ने उच्च न्यायालय के न्यायाधीश पर आईबी रिपोर्ट की अनदेखी की" शीर्षक के साथ एक समाचार छपा था। उक्त समाचार के कुछ बिंदुओं को कवर करने वाली एक छोटी रिपोर्ट अगले दिन हरिभूमि में छपी थी,

यानी 9 मई, 2003, जिसमें उक्त रिपोर्ट को एक अलग परिप्रेक्ष्य में पेश किया गया था। उनके अनुसार, यह उप-शीर्षक से स्पष्ट था, जिसका अंग्रेजी में अनुवाद इस प्रकार होगा:-

> "न्यायाधीशों की नियुक्ति में पारदर्शिता की आवश्यकता।"

इस प्रकार, यह समझाया गया है कि समाचार आइटम को एक ऐसी प्रणाली विकसित करने की संभावना तलाशने के उद्देश्य से प्रकाशित किया गया था जो उच्च स्तर पर न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में अधिकतम निष्पक्षता और पारदर्शिता सुनिश्चित करती है। उनके अनुसार, देश में उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति की पद्धति और मानदंड का प्रश्न पिछले दो दशकों से अधिक समय से सार्वजनिक बहस का विषय रहा है और यह मामला अभी भी प्रेस, संसद और अन्य अकादमिक जगत में चर्चा का विषय बना हुआ है। वृत्त. आगे दावा किया गया है कि समाचार को प्रकाशित करने का प्रयास उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण आयामों को सामने लाना था और इसका उद्देश्य किसी भी माननीय न्यायाधीश पर आक्षेप लगाना नहीं था। दावा किया गया है कि समाचार का विषय नियुक्ति की प्रक्रिया में पारदर्शिता की आवश्यकता पर प्रकाश डालने वाले उप-शीर्षक में प्रतिबिंबित होता है। इस प्रकार, यह दावा किया जाता है कि समाचार में इंटेलिजेंस ब्यूरो की रिपोर्ट को पवित्र बताने का कोई सचेत प्रयास नहीं किया गया है और यदि समाचार को पढ़ने पर ऐसी धारणा बनती है, तो यह पूरी तरह से अनजाने में है। अवमाननाकर्ता संख्या 3 ने भी बिना शर्त माफी मांगी है और इस मामले में गहरा और गंभीर खेद व्यक्त किया है यदि यह न्यायालय अभी भी इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि समाचार आइटम ने किसी भी माननीय न्यायाधीश पर आक्षेप लगाया है या किसी भी तरह से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप किया है। न्याय प्रशासन.

(9) श्री बलराज अरोड़ा, अवमाननाकर्ता संख्या 4 ने अपने उत्तर में स्पष्ट किया है कि 8 मई, 2003 के समाचार लेख के माध्यम से बड़े पैमाने पर जनता को यह धारणा देने का उनका इरादा नहीं था कि इंटेलिजेंस ब्यूरो की रिपोर्ट पवित्र थी या माननीय श्री न्यायमूर्ति ए.के. की नियुक्ति से संबंधित अंतिम शब्द गोयल. इसके अलावा उन्होंने इस न्यायालय से बिना शर्त और अयोग्य माफी की पेशकश की है, यदि यह धारणा 8 मई, 2003 के समाचार को पढ़ने से अनजाने में व्यक्त की गई है या एकत्र की गई है। उनका कहना है कि उनका बदनामी करने का कोई इरादा नहीं था। या श्री न्यायमूर्ति ए.के. द्वारा न्याय प्रशासन की निंदा करें। गोयल, इस न्यायालय के कॉलेजियम, भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कॉलेजियम और सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश जिनकी राय श्री न्यायमूर्ति गोयल की पदोन्नति की सिफारिश करने के लिए मांगी गई होगी। यदि समाचार से ऐसा आभास होता है तो कंटेम्बर नंबर 4 ने इस संबंध में बिना शर्त और अयोग्य माफी भी मांगी है। उनके द्वारा पूर्वोक्त रूप से प्रस्तुत की गई बिना शर्त माफी पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, श्री बलराज अरोड़ा ने स्पष्ट किया है कि 8 मई, 2003 को समाचार प्रकाशित

करने का एकमात्र उद्देश्य/इरादा महान सार्वजनिक हित के मामले पर प्रकाश डालना था, अर्थात नियुक्ति की प्रक्रिया माननीय श्री न्यायमूर्ति ए.के. के मामले के उदाहरण के साथ न्यायपालिका। गोयल. आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि लेख 2001 में इस न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में माननीय श्री न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल की नियुक्ति के लिए तथ्यों और घटनाओं का निष्पक्ष और गैर-विचारणीय वर्णन है। यह आगे बताया गया है कि फोकस यह केवल इंटेलिजेंस ब्यूरो की रिपोर्ट नहीं थी, बल्कि उत्तर देने वाले कंटेम्पर के पास उपलब्ध सरकारी दस्तावेजों पर आधारित संपूर्ण तथ्यात्मक मैट्रिक्स थी। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि चूंकि उक्त सामग्री लेखक/संवाददाता को अप्रैल, 2003 के अंतिम सप्ताह में प्राप्त हुई थी, इसलिए इस मामले पर ब्यूरो प्रमुख के साथ-साथ समाचार पत्र के स्थानीय संपादक और कार्यकारी संपादक द्वारा विचार-विमर्श किया गया था। आख़िरकार, 8 मई, 2003 के समाचार में इसकी परिणति हुई। इसलिए, यह स्पष्ट किया गया कि इस मुद्दे को देर से उठाने का कोई दुर्भावनापूर्ण इरादा नहीं था। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि अखबार की प्रामाणिकता इस तथ्य से स्पष्ट होती है कि जिस दिन समाचार लेख प्रकाशित हुआ था, माननीय कानून और न्याय मंत्री ने टाइम्स के संपादक को 8 मई, 2003 को एक पत्र संबोधित किया था। भारत के और उक्त पत्र के प्रासंगिक उद्धरण तुरंत और प्रमुखता से अगले ही दिन, यानी 9 मई, 2003 को "कानून मंत्री का प्रत्युत्तर" शीर्षक के तहत प्रकाशित किए गए। इस प्रकार, उत्तर देने वाले कंटेम्नर के अनुसार, यह कार्य समाचार पत्र द्वारा अपनाई गई रिपोर्टिंग के निष्पक्ष और निष्पक्ष तरीके को प्रदर्शित करता है। यह भी तर्क दिया गया है कि समाचार लेख नियुक्ति की प्रक्रिया से संबंधित है और सत्यनिष्ठा, न्याय प्रशासन या किसी न्यायिक प्राधिकरण की क्षमता पर कोई टिप्पणी नहीं करता है। यह दावा किया गया है कि एक न्यायिक अधिकारी के रूप में श्री न्यायमूर्ति ए.के. गोयल के कामकाज पर कोई टिप्पणी नहीं की गई थी और लेख का जोर प्रणाली में पारदर्शिता लाने के महत्व को उजागर करना था। इस समाचार को भारत के संविधान के अनुच्छेद 19 (एल) (ए) के तहत गारंटीकृत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के आधार पर भी उचित ठहराया गया है और दावा किया गया है कि प्रेस को उचित सीमा के भीतर स्वतंत्रता दी जानी चाहिए, भले ही उसका ध्यान केंद्रित हो। उच्चतम न्यायालय सहित न्यायालय का आलोचनात्मक ध्यान है।

(10) अंग्रेजी दैनिक टाइम्स ऑफ इंडिया के स्टाफ कॉरेस्पोंडेंट, अवमाननाकर्ता संख्या 5, श्री अक्षय मुकुल की ओर से एक समान उत्तर दायर किया गया है।

(11) श्री सूर्यकांत, विद्वान महाधिवक्ता, हरियाणा ने हमारे अनुरोध पर न्याय मित्र के रूप में न्यायालय की सहायता की, श्री आर.एस. बैंस, एडवोकेट, ने हमें अवमाननाकर्ता नंबर 1 के लिए संबोधित किया: श्री आर.एस. वरिष्ठ अधिवक्ता चीमा ने हमें अवमाननाकर्ता संख्या 2 और 3 के लिए संबोधित किया। श्री एम.एल. वरिष्ठ अधिवक्ता सरीन ने हमें अवमाननाकर्ता क्रमांक 4 और 5 के लिए संबोधित किया। उन्होंने कई प्राधिकारियों का भी हवाला दिया।

(12) अवमाननाकर्ताओं के बचाव का मूल जोर, जैसा कि उनके संबंधित उत्तरों में बताया गया है और जैसा कि उनके वकील द्वारा तर्क के दौरान पेश किया गया है, यह है कि दो समाचार पत्रों में प्रकाशित दो समाचारों ने केवल पारदर्शिता लाने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला है। उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति की प्रक्रिया, जो सार्वजनिक हित का मामला है और संसद सहित विभिन्न स्तरों पर इस पर बहस चल रही है, यह भी दावा किया गया है कि श्री न्यायमूर्ति ए.के. के न्याय प्रशासन को बदनाम करने और बदनाम करने का कोई भी प्रयास नहीं किया गया है। गोयल या इस न्यायालय के कॉलेजियम या भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय के। यह भी दावा किया गया है कि न्यायपालिका की संस्था को मजबूत करने के लिए ऐसे पहलुओं को उजागर करके प्रेस का सार्वजनिक कर्तव्य है। दलील दी गई है कि जजों की नियुक्ति का मामला सार्वजनिक है और इसमें पारदर्शिता की जरूरत है। ऐसी आवश्यकता को संसद द्वारा भी मान्यता दी गई है जो न्यायिक नियुक्तियों के उद्देश्य से न्यायिक आयोग के गठन से संबंधित विधेयक पर गरमागरम बहस कर रही है। इस प्रकार, वकील ने तर्क दिया है कि न्यायालय को न्यायाधीशों की चयन प्रक्रिया पर व्यक्त विचारों के प्रति अति संवेदनशील नहीं होना चाहिए और प्रेस को सामान्य रूप

से लोकतंत्र और विशेष रूप से न्यायपालिका की संस्था के हित में निष्पक्ष टिप्पणियां प्रकाशित करने के लिए स्वतंत्र होना चाहिए। उपरोक्त प्रस्तावों पर अधिकांश प्राधिकारियों का हवाला दिया गया है।

(13) अवमाननाकर्ताओं द्वारा अपनाए गए रुख को ध्यान में रखते हुए, हम पहले इस बात पर विचार करते हैं कि क्या टाइम्स ऑफ इंडिया और हरिभूमि में प्रकाशित समाचार केवल उच्च स्तर पर न्यायाधीशों की नियुक्ति सुनिश्चित करने के लिए एक प्रणाली विकसित करने की आवश्यकता से संबंधित हैं। निष्पक्षता और पारदर्शिता या यह माननीय श्री न्यायमूर्ति ए.के. गोयल के न्याय प्रशासन को बदनाम करने और बदनाम करने का एक प्रयास है, जिनका दो समाचार रिपोर्टों में विशेष रूप से नाम से उल्लेख किया गया था। इस सवाल का जवाब इस पर निर्भर करेगा. यह धारणा कि समाचार रिपोर्टों का एक सामान्य पाठक एकत्रित हो सकता है।

(14) हमने दो समाचारों को ध्यान से पढ़ा है और एक निश्चित धारणा के साथ छोड़ दिया है कि हमारे उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में श्री न्यायमूर्ति गोयल की नियुक्ति को बदनाम करने का प्रयास किया गया है, जिससे उन्हें अदालत की नजरों में बदनाम किया जा सके। आम जनता। चूंकि रिपोर्टों को सरकारी दस्तावेजों पर आधारित बताया गया था, जिनके बारे में दावा किया गया था कि वे अवमाननाकर्ता संख्या 4 और 5 के पास हैं, इसलिए इस अदालत ने उनसे इसका खुलासा करने के लिए कहा था। तदनुसार, उन्होंने न्यायमूर्ति आदर्श कुमार गोयल सहित इस न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की नियुक्ति से संबंधित कानून मंत्रालय के रिकॉर्ड से पांच पृष्ठों की फोटोस्टेट प्रतियां प्रस्तुत कीं। यह स्वीकार किया गया है कि इन पाँच पृष्ठों की प्रतियों के अलावा कोई अन्य सामग्री अवमाननाकर्ताओं के पास उपलब्ध नहीं है। हमने इन दस्तावेज़ों का अध्ययन किया है। हमने इन दस्तावेज़ों का अध्ययन किया है। पृष्ठ-1 में कुछ रिपोर्ट के पैराग्राफ 2.1 और 3 शामिल हैं, जिसका पूरा पाठ अवमाननाकर्ता संख्या 4 और 5 के पास उपलब्ध नहीं था और इस प्रकार, वे संभवतः उस संदर्भ को नहीं जान सके जिसमें उक्त पैराग्राफ में टिप्पणियाँ की गई थीं। अगले तीन पृष्ठ कानून, न्याय और कंपनी मामलों के मंत्री श्री अरुण जेटली के 19 मई, 2001 के एक नोट की प्रतियां हैं, जिसमें 3 मई, 2001 के कार्यवृत्त में भारत के राष्ट्रपति द्वारा की गई टिप्पणियों पर चर्चा की गई है और उपर्युक्त मामले को आगे बढ़ाने के लिए 18 मई, 2001 को माननीय कानून मंत्री द्वारा माननीय राष्ट्रपति के साथ मांगी गई बातचीत का भी संदर्भ दिया गया है। यह नोट प्रधान मंत्री के समक्ष रखा गया था, जिन्होंने 21 मई, 2003 को अनुमोदन के प्रतीक के रूप में उस पर अपने हस्ताक्षर किए थे। 5वां पृष्ठ श्री सहित तीन न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए भारत के राष्ट्रपति द्वारा दी गई मंजूरी की एक फोटोस्टेट प्रति है। .न्यायमूर्ति गोयल ने इसमें कुछ टिप्पणियाँ की हैं।

(15) हमने श्री न्यायमूर्ति गोयल की नियुक्ति से संबंधित प्रासंगिक रिकॉर्ड एक सीलबंद कवर में प्रस्तुत करने के लिए कहा था। ये रिकॉर्ड 25 अगस्त, 2003 को श्री एस. द्विकली, अवर सचिव, न्याय विभाग, कानून और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा हमारे समक्ष प्रस्तुत किए गए थे। यह सच है कि अवमाननाकर्ता संख्या के साथ उपलब्ध पाँच पृष्ठ .4 और 5 उक्त रिकॉर्ड का हिस्सा हैं। हालाँकि, इन दस्तावेजों को देखने से पता चलता है कि यह श्री न्यायमूर्ति गोयल की नियुक्ति से संबंधित पूरा रिकॉर्ड नहीं था। अवमाननाकर्ताओं को राष्ट्रपति द्वारा 3 मई, 2001 के अपने नोट में की गई टिप्पणियों का लाभ नहीं मिला। उन्हें 3 मई, 2001 के बाद की घटनाओं के बारे में भी जानकारी नहीं थी, जिनकी परिणति अंततः राष्ट्रपति के नोट में हुई थी। कानून मंत्री ने 19 मई 2001 को दिनांकित किया था जिसे प्रधानमंत्री के समक्ष रखा गया था। उनके पास इंटेलिजेंस ब्यूरो की पूरी रिपोर्ट भी नहीं थी और उन्होंने केवल अधूरे नोट में रिपोर्ट के सारांश पर समाचार रिपोर्टों को आधारित किया था। इसके अलावा, 19 मई, 2001 को कानून मंत्री द्वारा तैयार किए गए नोट में बाद की घटनाओं का उल्लेख किया गया था, जिसे समाचार रिपोर्टों में भी ठीक से प्रस्तुत नहीं किया गया है। यह स्पष्ट है कि आम पाठक को यह आभास देने के लिए समाचार रिपोर्टों में एक तिरछापन दिया गया है कि कानून मंत्री ने न्यायमूर्ति ए.के. की ईमानदारी के बारे में खुफिया ब्यूरो की रिपोर्ट को खारिज कर दिया था। गोयल ने अपने स्तर पर कहा कि सरकार ने उक्त रिपोर्ट को नजरअंदाज कर उनकी नियुक्ति की है।

(16) इस आलोक में विचार करने पर टाइम्स ऑफ इंडिया में प्रकाशित रिपोर्ट से निम्नलिखित तथ्यात्मक स्थिति सामने आती है:—

i) शीर्षक "सरकार ने उच्च न्यायालय के न्यायाधीश पर आईबी रिपोर्ट की अनदेखी की" स्पष्ट रूप से तथ्यात्मक स्थिति के विपरीत है, जो न केवल कानून मंत्रालय के रिकॉर्ड से स्पष्ट है, बल्कि कानून मंत्रालय के नोट से भी स्पष्ट है, जो स्वीकार्य रूप से उपलब्ध था। संवाददाता। कानून मंत्री ने स्पष्ट रूप से बताया था कि राष्ट्रपति द्वारा 3 मई, 2001 के मिनट्स में कुछ टिप्पणियां किए जाने के बाद, इस मामले पर इस न्यायालय के कॉलेजियम और उच्चतम न्यायालय द्वारा भी पुनर्विचार किया गया था। यह आगे बताया गया है कि इस न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और कॉलेजियम दोनों ने अखिल भारतीय अधिवक्ता परिषद के महासचिव के रूप में न्यायमूर्ति गोयल के जुड़ाव को ध्यान में रखा था और दोहराया था कि श्री गोयल के पास "एक ईमानदार और ईमानदार होने की त्रुटिहीन प्रतिष्ठा थी" वकील"। कानून मंत्री का नोट स्पष्ट रूप से बताता है कि इस न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और कॉलेजियम को "उनकी प्रतिष्ठा पर लांछन लगाने का कोई औचित्य नहीं मिला"। यह भी उल्लेख किया गया है कि ये विचार तब दर्ज किए गए थे जब मुख्य न्यायाधीश ने विचार का दायरा बढ़ाया था और कुछ न्यायाधीशों के विचार प्राप्त किए थे जो कॉलेजियम के सदस्य नहीं थे। इस प्रकार, समाचार रिपोर्ट का कैप्शन पूरी तरह से भ्रामक और तथ्यात्मक रूप से गलत है।

(ii) समाचार रिपोर्ट में, यह उल्लेख किया गया है कि "19 मई, 2001 के एक गोपनीय नोट में, जेटली ने गोयल की ईमानदारी पर आईबी के निष्कर्ष को एक अपमान के रूप में खारिज कर दिया"। दूसरी ओर, श्री अरुण जेटली के नोट के अवलोकन से स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि यह पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश और कॉलेजियम थे, जिन्हें श्री की प्रतिष्ठा पर हल्के प्रभाव के लिए कोई औचित्य नहीं मिला। इस प्रकार, रिपोर्टर द्वारा इन टिप्पणियों को श्री जेटली के लिए जिम्मेदार ठहराकर इस कैप्शन का समर्थन करने का प्रयास किया गया है कि यह कानून मंत्री और सरकार हैं जिन्होंने इंटेलिजेंस ब्यूरो की रिपोर्ट को खारिज कर दिया था।

(iii) समाचार रिपोर्ट यह भी स्पष्ट रूप से बताती है कि न्यायमूर्ति गोयल की ईमानदारी के बारे में प्रतिकूल आईबी रिपोर्ट के बावजूद उनकी नियुक्ति को आरएसएस के वकील विंग के साथ उनके राजनीतिक जुड़ाव के कारण बढ़ावा दिया गया था। यह स्पष्ट रूप से रिपोर्टर द्वारा व्यक्त की गई राय है और उत्तरदाताओं के पास मौजूद दस्तावेजों के आधार पर तथ्यात्मक स्थिति का बयान नहीं है। रिपोर्टर का यह सुझाव स्पष्ट रूप से इस न्यायालय और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कॉलेजियम पर संदेह पैदा करता है, जिन्होंने न्यायमूर्ति गोयल की नियुक्ति की सिफारिश दोहराई थी और सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश पर भी, जिनसे इस संबंध में परामर्श किया गया था।

(17) हरिभूमि में प्रकाशित समाचार रिपोर्ट भी इन्हीं शब्दों में है। दरअसल, इस रिपोर्ट में एक और बात सामने आई है जब कहा गया है कि राष्ट्रपति ने जस्टिस गोयल का नाम खारिज कर दिया है. अवमाननाकर्ता क्रमांक 3 इस कथन को सही ठहराने के लिए अपने पास मौजूद किसी भी सामग्री का उल्लेख नहीं कर पाया है जो तथ्यात्मक रूप से गलत है।

(18) अवमाननाकर्ता संख्या 4 और 5 ने यह तर्क देकर अपनी प्रामाणिकता को सही ठहराने की कोशिश की है कि उन्होंने तुरंत अगले ही दिन यानी 9 मई, 2003 को कानून मंत्री का प्रत्युत्तर प्रकाशित कर दिया था। इस तर्क की सराहना करने के लिए, हम इस पर ध्यान दे सकते हैं 9 मई, 2003 को टाइम्स ऑफ इंडिया में "कानून मंत्री का प्रत्युत्तर" शीर्षक के तहत प्रकाशित सामग्री, जो इस प्रकार है:-

"8 मई, 2003 को टाइम्स ऑफ इंडिया में छपी रिपोर्ट के संबंध में। पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय में न्यायाधीशों की नियुक्ति।

पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश ने दो वरिष्ठतम न्यायाधीशों से परामर्श करने के बाद 19 मई, 2000 को पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के रूप में नियुक्ति के लिए सात व्यक्तियों के नामों की सिफारिश की थी। यह कानून, न्याय और कंपनी मामलों के मंत्री के रूप में मेरे कार्यभार संभालने से पहले की बात है।

स्थापित प्रथा के अनुसार सरकार ने अपनी राय और सरकारी एजेंसियों द्वारा एकत्र की गई सामग्री के साथ इन सात व्यक्तियों के नाम सलाह के लिए भारत के मुख्य न्यायाधीश को भेज दिए।

अपने समक्ष मौजूद सभी सामग्री पर विचार करने के बाद भारत के मुख्य न्यायाधीश और सर्वोच्च न्यायालय के दो वरिष्ठ न्यायाधीशों ने 16 सितंबर, 2000 को सरकार को सलाह दी कि विभिन्न एजेंसियों की रिपोर्टों में निहित प्रासंगिक जानकारी और सामग्री को उच्च न्यायालय के कॉलेजियम के समक्ष पुनर्विचार के लिए रखा जाना चाहिए ।

उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को उन न्यायाधीशों के अलावा कुछ और न्यायाधीशों से परामर्श करना चाहिए जिनसे उन्होंने पहले परामर्श किया है।

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश ने परंपरागत तीन न्यायाधीशों के बजाय सात न्यायाधीशों के कॉलेजियम से परामर्श किया।

सात न्यायाधीशों की राय एकत्र करने के बाद उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश ने पाया कि सरकारी एजेंसियों की रिपोर्ट में शामिल टिप्पणियाँ "अनुमान, अनुमान और आधे सत्य" पर आधारित व्यापक टिप्पणियाँ थीं। मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि न्यायमूर्ति ए.के. गोयल की छवि एक ईमानदार और ईमानदार व्यक्ति की थी।

सरकार ने सात न्यायाधीशों और पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की राय सुप्रीम कोर्ट कॉलेजियम के समक्ष रखी, जिसने सरकार को सात सिफारिशों में से चार को नियुक्त करने की सलाह दी।

वर्तमान व्यवस्था के तहत, सरकार अपनी राय व्यक्त करती है और उसके बाद, सुप्रीम कोर्ट के कॉलेजियम की सलाह से बंधी होती है। इस मामले में सरकार ने तदनुसार कार्रवाई की। आपकी रिपोर्ट यह दर्शाती है कि सरकार ने खुफिया रिपोर्टों को खारिज कर दिया था और एक व्यक्ति को नियुक्त किया था, जो विकृत तथ्यों के अनुमान पर आधारित है।

-अरुण जेटली

अक्षय मुकुल का जवाब: जेटली ने कहा है कि सरकार न्यायिक नियुक्तियों पर केवल अपनी राय व्यक्त कर रही थी। लेकिन मई 19, 2001 के उनके नोट में कहा गया था कि "उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए अपने मामले पर विचार करने के लिए सिफारिश करने वाले के रास्ते में राजनीतिक झुकाव नहीं होना चाहिए।" कानून मंत्री ने आगे तर्क दिया, गोयल एक "स्व-निर्मित व्यक्ति हैं जो विपरीत परिस्थितियों से उभरे हैं, उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।"

(19) उपरोक्त के अवलोकन से पता चलता है कि कानून मंत्री के प्रत्युत्तर पर अवमाननाकर्ता संख्या 5 के उत्तर से स्पष्ट रूप से यह आभास होता है कि वह अभी भी समाचार रिपोर्ट में व्यक्त की गई अपनी राय को सही ठहराने की कोशिश कर रहे थे कि जस्टिस जियोल की ईमानदारी के बारे में आईबी की रिपोर्ट और कानून मंत्री द्वारा राजनीतिक झुकाव को खारिज कर दिया गया था जिसके परिणामस्वरूप श्री न्यायमूर्ति गोयल की नियुक्ति हुई थी। इसलिए, हम इस बात से संतुष्ट हैं कि दोनों समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचार केवल सामान्य रूप से न्यायाधीशों

की नियुक्ति प्रणाली के बारे में राय की अभिव्यक्ति नहीं हैं, बल्कि न्यायमूर्ति गोयल की छवि को धूमिल करने का एक सुविचारित प्रयास है। सामान्य पाठक को यह संदेश देने की कोशिश की गई है कि एक बेईमान व्यक्ति को केवल इसलिए न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया है क्योंकि उसका आरएसएस के वकील विंग के साथ राजनीतिक जुड़ाव है। एक आम पाठक के लिए, यह उद्देश्य न केवल कानून मंत्री या सरकार के लिए बल्कि इस न्यायालय और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के कॉलेजियम और सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीश के लिए भी जिम्मेदार होगा, जिनसे परामर्श किया गया था। यह मामला।

(20) इसलिए, अगला प्रश्न यह है कि क्या श्री न्यायमूर्ति गोयल से संबंधित समाचार संवेदनशील और भड़काऊ हैं या नहीं। कुछ इसी तरह की स्थिति में अवमानना के कानून का दायरा हाल ही में ए. जे. फिलिप, मुद्रक, प्रकाशक और कार्यवाहक संपादक के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के समक्ष विचार के लिए आया। द ट्रिब्यून प्रेस, सेक्टर 29, चंडीगढ़ (सीआर 1. 2003 का ओसीपी 10)। उस मामले में, 24 मई, 2003 को 'द ट्रिब्यून' में छपी एक खबर के संदर्भ में इस न्यायालय के एक माननीय न्यायाधीश द्वारा लिखे गए एक पत्र के आधार पर स्वत: संज्ञान अवमानना कार्रवाई शुरू की गई थी। खबर थी, माना, झूठ। रेजिडेंट एडिटर और संवाददाता को 19 सितंबर, 2003 के आदेश के तहत प्रथम दृष्टया अवमानना का दोषी ठहराया गया था। संविधान के अनुच्छेद 19 (एल) (ए) के तहत गारंटीकृत भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के दायरे से निपटते हुए, सर्वोच्च न्यायालय के विभिन्न प्राधिकारियों का उल्लेख करने के बाद, यह निम्नानुसार देखा गया: -

> 'ऊपर दिए गए निर्णयों से पता चलता है कि संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (ए) के तहत गारंटीकृत भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को हर इंसान का मूल अधिकार माना गया है। इसकी पहुंच और दायरा व्यापक और व्यापक है। जानने के अधिकार और सूचना के अधिकार को बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का अभिन्न अंग माना गया है। अपने व्यापक आयाम में प्रेस की स्वतंत्रता को भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के एक अभिन्न अंग के रूप में भी मान्यता दी गई है। न्यायालयों ने इस अधिकार के किसी भी आक्रमण या उल्लंघन के खिलाफ उत्साहपूर्वक रक्षा की है, लेकिन साथ ही, यह भी माना है कि आम जनता के हित में संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (ए) के तहत गारंटीकृत अधिकार पर उचित प्रतिबंध लगाया जा सकता है। . में (20.1) पूर्ण पीठ ने डॉ. डी.सी. सक्सेना बनाम भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश मामले में सर्वोच्च न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों पर भी भरोसा किया, (1) :—
>
> "इसलिए, न्याय के स्रोत को दूषित करने से मुक्त न्यायिक प्रक्रिया को विनियमित करना आवश्यक है ताकि लोगों को न्याय के स्रोत और उसके उचित प्रशासन की शुद्धता में जनता के विश्वास को कम करने से बचाया जा सके। इस प्रकार न्याय सुडौल, अदम्य और अबाधित बना रहता है। इसलिए, अवमानना के लिए सज़ा का उद्देश्य संपूर्ण न्यायालय की गरिमा या किसी व्यक्तिगत न्यायाधीश की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा पर हमले से रक्षा करना या उसे सही ठहराना नहीं है, बल्कि इसका उद्देश्य जनता की रक्षा करना है जो इसके अधीन हैं। न्यायालय का क्षेत्राधिकार और न्याय प्रशासन में अनुचित हस्तक्षेप को रोकना। यदि न्यायालय के अधिकार को कमजोर किया जाता है या उसमें बाधा उत्पन्न की जाती है, तो न्याय का स्रोत दूषित हो जाता है, जिससे वादी जनता या लोगों के लाभ के लिए बड़े पैमाने पर सही सोच रखने वाली जनता के मन में अविश्वास और अविश्वास पैदा होता है, प्रशासन के उचित संचालन के लिए न्यायपालिका की स्वतंत्रता न्याय की रक्षा की जानी चाहिए और उसे कोई क्षति नहीं पहुँचनी चाहिए। इसलिए, न्यायालय को बदनाम करना, न्याय की महिमा पर घिनौने हमले की एक सुविधाजनक अभिव्यक्ति है, जिसका उद्देश्य उसके अधिकार और न्याय प्रशासन में जनता के विश्वास को कमजोर करना है। दुर्भावनापूर्ण या निंदनीय प्रकाशन लोगों के मन में न्यायिक निर्णयों के प्रति सामान्य असंतोष और असंतोष पैदा करता है और उनके मन में उनका पालन करने के लिए अरुचि पैदा करता है। यदि कानून के प्रति लोगों की निष्ठा इतनी बुनियादी रूप से हिल गई है तो यह न्याय में सबसे महत्वपूर्ण और सबसे खतरनाक बाधा है जिसके लिए तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता है। अवमानना की कार्रवाई निजी व्यक्ति के रूप में न्यायाधीश की सुरक्षा के लिए नहीं है, बल्कि इसलिए है क्योंकि वे ऐसे माध्यम हैं जिनके द्वारा लोगों को बिना किसी

डर या पक्षपात के न्याय दिलाया जाता है। संविधान की तीसरी अनुसूची के अनुसार न्यायाधीश द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान लिया जाता है कि वह बिना किसी डर या पक्षपात, स्नेह या द्वेष के अपनी सर्वोत्तम क्षमता, ज्ञान और निर्णय के अनुसार कार्यालय के कर्तव्यों का विधिवत और ईमानदारी से पालन करेगा। संविधान और कानून. इसके अनुसार न्यायाधीशों को हमेशा निष्पक्ष रहना चाहिए और सभी लोगों को यह जानना चाहिए कि वे निष्पक्ष हैं। क्या उन पर अनुचित उद्देश्यों, पूर्वाग्रह, भ्रष्टाचार या पक्षपात का आरोप लगाया जाना चाहिए, लोग समय पर विश्वास खो देंगे। न्यायाधीश को अलगाव और निष्पक्षता की एक डिग्री की आवश्यकता होती है जिसे तब प्राप्त नहीं किया जा सकता जब न्यायाधीशों को उत्पीड़न और दुर्व्यवहार के डर से और अभियोजन या इस्तीफे की गैर-जिम्मेदाराना मांगों के लिए लगातार अपने कंधों पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है। इसके तीव्र प्रभाव से संपूर्ण न्याय प्रशासन को नुकसान होगा। यही कारण है कि न्यायाधीशों की निंदा करने को संसद द्वारा न्यायालय की अवमानना माना गया, जिसके लिए कारावास या जुर्माना की सजा हो सकती है।

इसलिए, अदालत को बदनाम करने का मतलब न्यायाधीशों या न्यायपालिका के रूप में न्यायाधीशों की शत्रुतापूर्ण आलोचना होगी। किसी न्यायाधीश पर उसके पद के संबंध में किसी भी व्यक्तिगत हमले को मानहानि या बदनामी के कानून के तहत निपटाया जाता है, फिर भी एक न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश के संबंध में अपमानजनक प्रकाशन अदालत या न्यायाधीशों को अवमानना में लाता है, न्याय के लिए एक गंभीर बाधा और अतिक्रमण है। न्याय की महिमा. न्यायालय की गरिमा को कम करने के लिए बनाया गया किसी न्यायाधीश का कोई भी व्यंग्य न्याय प्रशासन या न्याय की महिमा में जनता के विश्वास को नष्ट कर देगा, कमजोर कर देगा या कम करने की प्रवृत्ति पैदा करेगा। इसलिए, यह एक न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश की बदनामी होगी, दूसरे शब्दों में, एक न्यायाधीश पर पक्षपात, भ्रष्टाचार, पूर्वाग्रह, अनुचित उद्देश्यों का आरोप लगाना अदालत की बदनामी होगी और अदालत की अवमानना होगी। अपराध का गंभीर कारण है: हरजय सिंह (सुप्रा) और अरुंधति रॉय, रे (सुप्रा) में, सर्वोच्च ने, बिना किसी अनिश्चित शब्दों के, माना है कि संविधान के अनुच्छेद 19(एल)(ए) के तहत गारंटीकृत भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं है। बेलगाम और इस अधिकार का प्रयोग करने की आड़ में, कोई भी नागरिक या समाचार पत्र न्यायपालिका की संस्था को लांछित नहीं कर सकता, अपमानित नहीं कर सकता या बदनाम नहीं कर सकता।

इस मुद्दे को दूसरे दृष्टिकोण से देखा जा सकता है, संविधान का भाग-III मौलिक अधिकारों की गारंटी देता है (इनमें से कुछ अधिकार केवल नागरिकों के लिए उपलब्ध हैं) जिसमें भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार भी शामिल है, भाग-IVA प्रत्येक नागरिक के मौलिक कर्तव्यों को निर्दिष्ट करता है जो संविधान का पालन करने और उसके आदर्शों और संस्थानों का सम्मान करने का कर्तव्य शामिल है। हमारी राय में, एक नागरिक, जो संविधान के भाग-III के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों का प्रयोग करना चाहता है, वह अपने कर्तव्यों को पूरा करने के लिए एक संवैधानिक दायित्व के तहत है और जो अपने मौलिक कर्तव्यों का पालन नहीं करता है, उसे मौलिक अधिकारों का आनंद लेने का कोई अधिकार नहीं है। मीडिया के प्रबंधन और संचालन में शामिल लोग भाषण और अभिव्यक्ति के मौलिक अधिकार की सुरक्षा का दावा केवल तब तक कर सकते हैं जब तक कि वे अनुच्छेद 51-ए में पहचाने गए अपने कर्तव्यों को करने के लिए तैयार नहीं हैं, जैसा कि ऊपर बताया गया है, संविधान का पालन करने का कर्तव्य भी शामिल है। और इसके आदर्शों और संस्था का सम्मान करें। प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, जो सार्वजनिक हित का प्रहरी होने का दावा करता है, एक भारी दायित्व के तहत है कि वह शब्दों में या अन्यथा समाचार आइटम आदि को छापने या प्रकाशित करने से परहेज करेगा, जिनकी प्रवृत्ति न्यायपालिका सहित संवैधानिक संस्थानों को बदनाम करने की है । इसका मतलब यह नहीं है कि यह प्रणाली के बारे में सही तथ्यों की रिपोर्ट नहीं कर सकती है और यहां तक कि कमियों और कमियों को भी इंगित नहीं कर सकती है, लेकिन उन्हें झूठी रिपोर्ट छापने या प्रकाशित करके बदनाम करने या इसमें शामिल होने का अधिकार नहीं है। दुष्प्रचार जिसमें समग्र रूप से व्यवस्था में जनता के विश्वास को हिलाने की प्रवृत्ति होती है।"

(20.1) पूर्ण पीठ ने **डॉ. डी.सी. सक्सेना बनाम भारत के माननीय मुख्य न्यायाधीश**[1] मामले में सर्वोच्च न्यायालय की निम्नलिखित टिप्पणियों पर भी भरोसा किया, :—

> "इसलिए, न्याय के स्रोत को दूषित करने से मुक्त न्यायिक प्रक्रिया को विनियमित करना आवश्यक है ताकि लोगों को न्याय के स्रोत और उसके उचित प्रशासन की शुद्धता में जनता के विश्वास को कम करने से बचाया जा सके। इस प्रकार न्याय सुडौल, अदम्य और अबाधित बना रहता है। इसलिए, अवमानना के लिए सज़ा का उद्देश्य संपूर्ण न्यायालय की गरिमा या किसी व्यक्तिगत न्यायाधीश की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा पर हमले से रक्षा करना या उसे सही ठहराना नहीं है, बल्कि इसका उद्देश्य जनता की रक्षा करना है जो इसके अधीन हैं। न्यायालय का क्षेत्राधिकार और न्याय प्रशासन में अनुचित हस्तक्षेप को रोकना। यदि न्यायालय के अधिकार को कमजोर किया जाता है या उसमें बाधा उत्पन्न की जाती है, तो न्याय का स्रोत दूषित हो जाता है, जिससे वादी जनता या लोगों के लाभ के लिए बड़े पैमाने पर सही सोच रखने वाली जनता के मन में अविश्वास और अविश्वास पैदा होता है, प्रशासन के उचित संचालन के लिए न्यायपालिका की स्वतंत्रता न्याय की रक्षा की जानी चाहिए और उसे कोई क्षति नहीं पहुँचनी चाहिए। इसलिए, न्यायालय को बदनाम करना, न्याय की महिमा पर घिनौने हमले की एक सुविधाजनक अभिव्यक्ति है, जिसका उद्देश्य उसके अधिकार और न्याय प्रशासन में जनता के विश्वास को कमजोर करना है। दुर्भावनापूर्ण या निंदनीय प्रकाशन लोगों के मन में न्यायिक निर्णयों के प्रति सामान्य असंतोष और असंतोष पैदा करता है और उनके मन में उनका पालन करने के लिए अरुचि पैदा करता है। यदि कानून के प्रति लोगों की निष्ठा इतनी बुनियादी रूप से हिल गई है तो यह न्याय में सबसे महत्वपूर्ण और सबसे खतरनाक बाधा है जिसके लिए तत्काल कार्रवाई की आवश्यकता है। अवमानना की कार्रवाई निजी व्यक्ति के रूप में न्यायाधीश की सुरक्षा के लिए नहीं है, बल्कि इसलिए है क्योंकि वे ऐसे माध्यम हैं जिनके द्वारा लोगों को बिना किसी डर या पक्षपात के न्याय दिलाया जाता है। संविधान की तीसरी अनुसूची के अनुसार न्यायाधीश द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान लिया जाता है कि वह बिना किसी डर या पक्षपात, स्नेह या द्वेष के अपनी सर्वोत्तम क्षमता, ज्ञान और निर्णय के अनुसार कार्यालय के कर्तव्यों का विधिवत और ईमानदारी से पालन करेगा। संविधान और कानून. इसके अनुसार न्यायाधीशों को हमेशा निष्पक्ष रहना चाहिए और सभी लोगों को यह जानना चाहिए कि वे निष्पक्ष हैं। क्या उन पर अनुचित उद्देश्यों, पूर्वाग्रह, भ्रष्टाचार या पक्षपात का आरोप लगाया जाना चाहिए, लोग समय पर विश्वास खो देंगे। न्यायाधीश को अलगाव और निष्पक्षता की एक डिग्री की आवश्यकता होती है जिसे तब प्राप्त नहीं किया जा सकता जब न्यायाधीशों को उत्पीड़न और दुर्व्यवहार के डर से और अभियोजन या इस्तीफे की गैर-जिम्मेदाराना मांगों के लिए लगातार अपने कंधों पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है। इसके तीव्र प्रभाव से संपूर्ण न्याय प्रशासन को नुकसान होगा। यही कारण है कि न्यायाधीशों की निंदा करने को संसद द्वारा न्यायालय की अवमानना माना गया, जिसके लिए कारावास या जुर्माना की सजा हो सकती है।
>
> इसलिए, अदालत को बदनाम करने का मतलब न्यायाधीशों या न्यायपालिका के रूप में न्यायाधीशों की शत्रुतापूर्ण आलोचना होगी। किसी न्यायाधीश पर उसके पद के संबंध में किसी भी व्यक्तिगत हमले को मानहानि या बदनामी के कानून के तहत निपटाया जाता है, फिर भी एक न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश के संबंध में अपमानजनक प्रकाशन अदालत या न्यायाधीशों को अवमानना में लाता है, न्याय के लिए एक गंभीर बाधा और अतिक्रमण है। न्याय की महिमा. न्यायालय की गरिमा को कम करने के लिए बनाया गया किसी न्यायाधीश का कोई भी व्यंग्य न्याय प्रशासन या न्याय की महिमा में जनता के विश्वास को नष्ट कर देगा, कमजोर कर देगा या कम करने की प्रवृत्ति पैदा करेगा। इसलिए, यह एक न्यायाधीश के रूप में न्यायाधीश की बदनामी होगी, दूसरे शब्दों में, एक न्यायाधीश पर पक्षपात, भ्रष्टाचार, पूर्वाग्रह, अनुचित उद्देश्यों का आरोप लगाना अदालत की बदनामी होगी और अदालत की अवमानना होगी। अपराध का गंभीर कारण है कि उसकी गरिमा या अधिकार को कम करना या न्याय की महिमा का अपमान करना। जब अवमाननाकर्ता न्यायालय के अधिकार को चुनौती देता है, तो वह न्यायाधीश के कार्यालय के कर्तव्यों

[1] [1] (1996) 5 एस.सी.सी. 216

के पालन या न्यायिक प्रक्रिया या न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप करता है या न्यायाधीश या न्यायपालिका को अवमानना में लाने की प्रवृत्ति पैदा करता है। इसलिए, अधिनियम की धारा 2(सी) व्यापक अभिव्यक्ति में आपराधिक अवमानना को परिभाषित करती है कि कोई भी प्रकाशन, चाहे शब्दों द्वारा, बोले गए या लिखित, या संकेतों द्वारा, या दृश्य प्रतिनिधित्व द्वारा, या अन्यथा किसी भी मामले या किसी अन्य कार्य को करने से। जो कुछ भी किसी न्यायालय के अधिकार को बदनाम करता है या बदनाम करने की प्रवृत्ति रखता है, या कम करता है या कम करने की प्रवृत्ति रखता है; या पूर्वाग्रह, या किसी न्यायिक कार्यवाही के उचित पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप करता है या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है; या किसी अन्य तरीके से न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप करता है या हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति रखता है, या बाधा डालता है या बाधा डालने की प्रवृत्ति रखता है, तो यह एक आपराधिक अवमानना है। इसलिए, न्यायालय को बदनाम करने की प्रवृत्ति या न्यायालय के अधिकार को कम करने की प्रवृत्ति या न्याय के अधिकार या महिमा को चुनौती देने की प्रवृत्ति में हस्तक्षेप करने की प्रवृत्ति, एक आपराधिक अवमानना होगी। अपमानजनक कृत्य के अलावा, कोई भी प्रवृत्ति यदि न्यायालय के अधिकार को कम करने या कम करने की ओर ले जाती है तो यह एक आपराधिक अवमानना है। अवमाननाकर्ता का कोई भी आचरण जिसमें न्यायाधीश या अदालत को अवमानना में लाने की प्रवृत्ति हो या जो अदालत के अधिकार को कम करने की प्रवृत्ति पैदा करता हो, वह भी अदालत की अवमानना होगी।"

(20.2) ट्रिब्यून के रेजिडेंट एडिटर और संवाददाता को प्रथम दृष्टया अदालत की अवमानना करने का दोषी मानते हुए, पूर्ण पीठ ने निम्नानुसार निष्कर्ष निकाला: -

"उपरोक्त चर्चा के आधार पर, हम मानते हैं कि विचाराधीन समाचार आइटम को मनगढ़ंत और प्रकाशित किया गया था, जिसका उद्देश्य पूरी तरह से गलत और शरारती दावा करके पूरी न्यायपालिका को बदनाम करना था कि उच्च न्यायालय का एक न्यायाधीश भ्रष्टाचार के मामले से जुड़ा था। अधीनस्थ न्यायपालिका के दो सदस्यों के खिलाफ मामला दर्ज किया गया है और उनका नाम एफ.आई.आर. में शामिल किया गया है। पहले से ही पंजीकृत। समाचार के लेखक को इसके झूठ के बारे में पता था और फिर भी उन्होंने दो राज्यों और केंद्र शासित प्रदेश, चंडीगढ़ की न्यायिक प्रणाली को बदनाम करने के लिए गलत इरादे से पहले पन्ने पर इसके प्रकाशन में हेराफेरी की। दुर्भाग्य से, अखबार के मुद्रण और प्रकाशन में शामिल लोगों ने बेहद गैर-जिम्मेदाराना तरीके से काम करते हुए एक स्पष्ट रूप से गलत समाचार को प्रकाशित करने की अनुमति दी, जबकि उन्हें इस बात का एहसास नहीं था कि इससे न्यायपालिका की संवैधानिक संस्था को अपूरणीय क्षति होगी। उन्हें यह महसूस करना चाहिए कि उनके गैर-जिम्मेदार और घृणित कार्य, वर्तमान की तरह, मुकदमेबाजी करने वाली जनता के मन में इसकी अखंडता और विश्वसनीयता के बारे में गलत धारणा पैदा करके न्यायपालिका की स्वतंत्रता को नष्ट करने की क्षमता रखते हैं। उन्हें यह भी समझना चाहिए कि स्वतंत्र प्रेस तभी जीवित रह सकती है जब इसे स्वतंत्र न्यायपालिका द्वारा संरक्षित किया जाएगा, अन्यथा यह देश की लोकतांत्रिक संस्था को नष्ट करने पर तुली हुई ताकतों का निशाना बन जाएगी।

(20.3) इसी प्रकार, पटना उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने पुनः: **हिंदुस्तान टाइम्स के रेजिडेंट एडिटर और अन्य**[2], जिसमें हममें से एक (मुख्य न्यायाधीश) एक पक्ष था, ने एक समान स्थिति में अवमानना के कानून पर विस्तार से विचार किया है। कलकत्ता उच्च न्यायालय के डिवीजन बेंच के रे: **कांति बिस्वास और अन्य**[3] के फैसले का हवाला दिया, और मुखर्जी, जे. की विभिन्न टिप्पणियों को बड़े पैमाने पर उद्धृत किया, जिनमें से कुछ नीचे पुन: प्रस्तुत हैं: -

[2] 1989 पीएलजे आर 821

[3] एआईआर 1918 कलकत्ता 988

".....इन मामलों से जो सिद्धांत निकलता है वह यह है कि न्यायाधीशों पर इस प्रकार के हमलों के लिए सज़ा दी जाती है, न कि पूरे न्यायालय को या न्यायालय के व्यक्तिगत न्यायाधीशों को हमले की पुनरावृत्ति से बचाने की दृष्टि से, बल्कि जनता और विशेष रूप से उन लोगों की रक्षा करने की दृष्टि से, जो, या तो स्वेच्छा से या मजबूरी से, न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के अधीन हैं, यदि ट्रिब्यूनल के अधिकार को कमजोर या कमजोर किया जाता है, तो वे नुकसान उठाएंगे।''

"मेरी राय में इस न्यायालय के पास निस्संदेह ऐसे व्यक्तियों से निपटने का क्षेत्राधिकार है, जिन्होंने न्यायाधीशों पर निंदनीय हमले करके अवमानना की है, और ऐसी शक्ति का प्रयोग वर्तमान उदाहरण में किया जाना चाहिए। जब मैं यह मानता हूं तो मैं मुद्रक और प्रकाशक के दावे को नजरअंदाज नहीं करता कि हमारे सामने लिखे लेख उनके द्वारा अच्छे विश्वास और सार्वजनिक हित में प्रकाशित किए गए थे। मुझे इस दलील की ईमानदारी पर गंभीर संदेह नजर आता है। लेकिन, इस धारणा पर भी कि यह आरोप अक्षरश: सत्य है, मैं यह जोड़ना चाहता हूं, हालांकि मैं प्रेस की स्वतंत्रता के महत्व को किसी भी हद तक कम नहीं आंकता, लेकिन मैं यह समीचीन नहीं रख सकता कि समुदाय के किसी भी वर्ग को ऐसा करना चाहिए। न्यायालयों पर हमला करने का विशेषाधिकार प्राप्त है ताकि वादकारियों के अधिकारों में हस्तक्षेप किया जा सके या न्याय प्रशासन को शर्मिंदा किया जा सके1। समाचार पत्रों के प्रकाशकों के पास न्यायालयों के आचरण को सार्वजनिक नोटिस में लाने का अधिकार है, लेकिन दूसरों की तुलना में कोई बड़ा अधिकार नहीं है, और बशर्ते कि प्रकाशन सच्चे और निष्पक्ष हों; किसी भी व्यक्ति द्वारा न्यायालयों में या न्यायालयों द्वारा किए गए कार्यों के प्रति अस्वीकृति की स्वतंत्र अभिव्यक्ति को रोकने के लिए कोई कानून नहीं है। लेकिन प्रेस की स्वतंत्रता को लाइसेंस या उस स्वतंत्रता के दुरुपयोग से भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए, और हालांकि यह सच हो सकता है कि जहां प्रेस की स्वतंत्रता और सार्वजनिक टिप्पणियों की स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है, वहां अत्याचारी प्राणी होते हैं, कम से कम यह भी उतना ही सच है कि जहां निंदा करने वाले प्राणी होते हैं , वहां प्रेस की स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है; और न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप करने वाले किसी भी प्रकाशन को दंडित करने के लिए रिकॉर्ड के सुपीरियर न्यायालयों की अंतर्निहित शक्ति को किसी भी तरह से प्रिंटर और प्रकाशक द्वारा आग्रह किए गए विचारों से प्रतिबंधित नहीं माना जा सकता है।

डिवीजन बेंच ने आगे कहा कि सुप्रीम कोर्ट के संविधान के बाद के दृष्टिकोण को **बाचिना रामकृष्ण रेड्डी बनाम मद्रास राज्य**[4] के मामले में पहली अभिव्यक्ति मिली, और शीर्ष अदालत की निम्नलिखित टिप्पणियों पर प्रकाश डाला गया: -

"जब किसी न्यायाधीश को बदनाम करने का कार्य न्याय के उचित पाठ्यक्रम या कानून के उचित प्रशासन में बाधा डालने या हस्तक्षेप करने के लिए किया जाता है, तो यह निश्चित रूप से अवमानना की श्रेणी में आएगा। अवमानना का अपराध वास्तव में न्यायालय के अधिकार और प्रभाव को कमजोर करके जनता के साथ किया गया अन्याय है, जो उनकी भलाई के लिए मौजूद है। जैसा कि सिल्मोट सी.जे. विलमोट की राय पी में कहा गया था। 256 : रेक्स वी. डेविस 30 पृष्ट 40-41 पर।

"न्यायाधीशों पर हमले से लोगों के मन में सभी न्यायिक कार्यों के प्रति सामान्य असंतोष पैदा होता है.....और जब भी मनुष्य की निष्ठा होती है कानून इतने बुनियादी रूप से हिल गए हैं कि यह न्याय में सबसे घातक और खतरनाक बाधा है और मेरी राय में किसी भी अन्य बाधा की तुलना में अधिक तीव्र और तत्काल निवारण की आवश्यकता है: निजी व्यक्तियों के रूप में न्यायाधीशों के लिए नहीं, बल्कि इसलिए कि वे न्यायाधीश हैं वे माध्यम जिनके द्वारा राजा का न्याय लोगों तक पहुँचाया जाता है।"

[4] एआईआर 1952 एस.सी., 49

"…. विचाराधीन लेख एक न्यायिक अधिकारी की सत्यनिष्ठा और ईमानदारी पर एक घिनौना हमला है। विशिष्ट उदाहरण दिए गए हैं जहां अधिकारी पर रिश्वत लेने या उन वादियों के साथ अभद्र व्यवहार करने का आरोप है जिन्होंने उसकी बेईमान मांगों को पूरा नहीं किया। यदि आरोप सही थे, तो जाहिर तौर पर इन मामलों को प्रकाश में लाना जनता के हित में होगा। लेकिन अगर वे झूठे थे, तो वे न्याय प्रशासन में जनता के विश्वास को कम नहीं कर सकते और न्यायपालिका को बदनाम कर सकते हैं। अपीलकर्ता, हालांकि उसने लेख के प्रकाशन के संबंध में पूरी ज़िम्मेदारी ली थी, वह उसमें लगाए गए किसी भी आरोप को साक्ष्य द्वारा प्रमाणित करने की स्थिति में नहीं था..."

डिवीजन बेंच ने इस विषय पर केस कानून का विश्लेषण करने के बाद निम्नानुसार टिप्पणी की: -

".....लेकिन न्यायपालिका पर हमला करने वालों को याद रखना चाहिए कि वे एक ऐसी संस्था पर हमला कर रहे हैं जो कानून के शासन के अस्तित्व के लिए अपरिहार्य है लेकिन जिसके पास अपनी रक्षा का कोई साधन नहीं है। चीजों की प्रकृति के अनुसार, यह खुद को खुले युद्ध में शामिल नहीं कर सकता और न ही विरोधाभासों को दूर करने में शामिल हो सकता है। न्याय की तलवार न्याय की देवी के हाथ में है, न कि नश्वर न्यायाधीशों के हाथ में। इसलिए, न्यायाधीशों को उनके चरित्र पर निराधार हमलों से कानून का उचित संरक्षण मिलना चाहिए।"

पीठ का यह भी विचार था कि प्रेस ऐसी शरारती रिपोर्टों के बचाव के रूप में बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अपने अधिकार का दावा नहीं कर सकता है। न्यायालय ने कहा कि "अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अन्य सीमाओं के अलावा, विधानमंडल और अदालतों के विशेषाधिकारों द्वारा सीमित होनी चाहिए"। डिवीजन बेंच ने आगे कहा:-

"..... एक लेखन, कास्टिंग, अनौचित्य का आरोप, की कमी किसी न्यायाधीश के प्रति ईमानदारी और परोक्ष इरादे अदालत की अवमानना का गठन करते हैं क्योंकि इस तरह के आरोप या अनुचितता, ईमानदारी की कमी और परोक्ष इरादे अंततः अदालतों और न्याय प्रशासन में जनता के विश्वास को हिला सकते हैं और सार्वजनिक हित को नुकसान पहुंचा सकते हैं।''

अपने सहमतिपूर्ण फैसले में, हममें से एक (मुख्य न्यायाधीश) ने निम्नानुसार निष्कर्ष निकाला था: -

"किसी न्यायाधीश पर उसके आचरण या उसके निर्णय के संबंध में अपमानजनक हमले का न्याय प्रशासन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और हमारे जैसे देश में न्यायपालिका में जनता के विश्वास को कम करने का अपरिहार्य प्रभाव पड़ता है और यदि न्यायपालिका में विश्वास है न्याय के उचित प्रशासन के नष्ट होने से निश्चित रूप से नुकसान होता है।''

(21) इसलिए, हमारा मानना है कि वर्तमान मामला ए.जे. के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ के निर्णयों द्वारा पूरी तरह से कवर किया गया है। **ए. ज. फिलिप** (सुप्रा) और पटना उच्च न्यायालय द्वारा **रे: हिंदुस्तान टाइम्स के रेजिडेंट एडिटर और अन्य** (सुप्रा) दोनों मामलों में अवमाननाकर्ताओं को समान परिस्थितियों में न्यायालय की आपराधिक अवमानना करने के लिए दोषी ठहराया गया था।

(22) इसलिए, हम हमारे सामने उद्धृत विभिन्न प्राधिकारियों से निपटना आवश्यक नहीं समझते हैं जो विभिन्न स्थितियों से निपटते हैं। उन प्राधिकरणों में निर्धारित कानून को लेकर कोई विवाद नहीं है। **रिलायंस पेट्रोकेमिकल्स लिमिटेड बनाम इंडियन एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स बॉम्बे प्राइवेट लिमिटेड और अन्य**[5] में माननीय

[5] एआईआर 1989 एस.सी. 190

सर्वोच्च न्यायालय ने संपत्तियों के मामले में यह भी माना है कि अवमानना के कानून का निर्णय प्रत्येक मामले के तथ्यों की पृष्ठभूमि में किया जाना चाहिए।

(23) तदनुसार, हमारा विचार है कि अवमाननाकर्ता संख्या 3, 4 और 5 दो समाचार पत्रों में समाचार प्रकाशित करने के लिए न्यायालय की आपराधिक अवमानना करने के दोषी हैं। अवमाननाकर्ता नंबर 2-देवेंद्र बालियान को यह मानकर नोटिस जारी किया गया था कि वह हरिभूमि समाचार पत्र के प्रकाशक थे। हालाँकि, अपने उत्तर में उन्होंने सही बताया है कि उस समाचार पत्र के प्रकाशक कंटेम्पनर नंबर 3- श्री अभिमनु हैं, न कि वह। तदनुसार, उसे जारी किया गया नियम उन्मोचित किया जाता है।

(24) अब हम अवमाननाकर्ता संख्या 1 के मामले से निपटेंगे; अर्थात् श्री अजय बंसल, अधिवक्ता के मामले से।

(24-ए) श्री बंसल द्वारा जारी कानूनी नोटिस के अवलोकन से पता चलता है कि उनके कृत्य को हरिभूमि में प्रकाशित समाचार रिपोर्ट द्वारा प्रचारित किया गया है। दरअसल, नोटिस में ही उक्त समाचार रिपोर्ट को पूरी तरह से दोहराया गया है और उसी आधार पर कार्रवाई प्रस्तावित की गई है। नोटिस में इस्तेमाल की गई भाषा असंयमित और अवांछनीय है। श्री अजय बंसल के वकील ने इसका कारण अंग्रेजी का उचित ज्ञान न होना बताया है। दरअसल, श्री अजय बंसल ने अपने जवाब में माना है कि उनके द्वारा इस्तेमाल की गयी भाषा कड़वी है. उन्होंने इसके लिए न्यायपालिका में अपने कड़वे अनुभवों को जिम्मेदार ठहराया है। उन्होंने आगे कहा है कि अब उन्हें एहसास हुआ है कि यह बेहद कठोर और अनावश्यक था जिसके लिए उन्होंने बिना शर्त माफी मांगी है। हम श्री अजय बंसल द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण से संतुष्ट नहीं हैं। वह लंबे समय से वकालत करने वाले और कानून के प्रावधानों से अच्छी तरह परिचित होने का दावा करते हैं। वह रिट याचिका दायर करने जैसे अपने संवैधानिक अधिकारों से परिचित होने का भी दावा करता है। इसलिए, वह किसी न्यायाधीश को हटाने की संवैधानिक प्रक्रिया से अनभिज्ञ होने का दावा नहीं कर सकता। वह जानते थे कि किसी न्यायाधीश को न तो भारत के राष्ट्रपति द्वारा और न ही भारत के मुख्य न्यायाधीश द्वारा हटाया जा सकता है। इन परिस्थितियों में, उन्हें एक न्यायाधीश को हटाने या फिर रिट याचिका का सामना करने के लिए कानूनी नोटिस भेजना, न्यायपालिका पर दबाव डालने और उसके स्वतंत्र कामकाज में हस्तक्षेप करने के प्रयास के अलावा और कुछ नहीं है। इसी प्रकार, एक माननीय न्यायाधीश को कथित न्यायाधीश के रूप में वर्णित करना एक न्यायाधीश के रूप में उनकी छवि को धूमिल करने का प्रयास है। एक माननीय न्यायाधीश को "कथित न्यायाधीश" के रूप में वर्णित करके, न्यायालय के अधिकार को चुनौती दी गई है, जैसा कि डी.सी. सक्सेना के मामले (सुप्रा) में सर्वोच्च न्यायालय ने माना था, यह न्यायाधीश के कार्यालय के कर्तव्यों के पालन और प्रशासन में हस्तक्षेप के समान है। न्याय। इस प्रकार, यह केवल असंयमित और कठोर भाषा के उपयोग का मामला नहीं है, बल्कि विशेष रूप से एक माननीय न्यायाधीश और समग्र रूप से न्यायपालिका की छवि को धूमिल करने का उनका एक सोचा-समझा प्रयास है। इस प्रकार, हमारा विचार है कि वह न्यायालय की आपराधिक अवमानना करने का भी दोषी है।

(25) हमारे विचार के लिए अगला प्रश्न यह है कि क्या जिन व्यक्तियों को न्यायालय की आपराधिक अवमानना करते हुए पाया गया है, उन्हें दंडित किया जाना चाहिए और यदि हां, तो सजा की मात्रा क्या होगी।

(26) जहां तक अवमान्नकर्ता नंबर 1, अजय बंसल का सवाल है तो उनका स्पष्टीकरण पूर्णतया असंतोषजनक पाया गया है। उन्होंने केवल कठोर और असंयमित भाषा के इस्तेमाल की बात स्वीकार की है और इसके लिए माफी मांगी है। हालाँकि, उन्होंने अपने कानूनी नोटिस को हरिभूमि और टाइम्स ऑफ इंडिया में छपी दो समाचार रिपोर्टों की अगली कड़ी बताकर उचित ठहराया है। जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, सर्वोच्च राष्ट्रपति सहित तीन संवैधानिक प्राधिकारियों को कानूनी नोटिस पूरी तरह से अनुचित था। इसलिए, हम इस बात से संतुष्ट हैं कि उसके अपराध को हल्के में नहीं लिया जा सकता। किसी भी व्यक्ति की ओर से ऐसा कृत्य निंदनीय है, लेकिन यह तब दोगुना हो जाता है जब यह किसी ऐसे व्यक्ति की ओर से होता है जो लंबे समय से वकालत करने का दावा करता है। आखिरी दिन तो वह हमारी छुट्टी के बिना ही गैरहाजिर भी हो गये. हालाँकि, कोई कारावास देने के बजाय, हम उस पर रुपये का जुर्माना लगाते हैं। तीन माह के भीतर 2,000 रुपये जमा करने होंगे, अन्यथा उसे भविष्य में सावधान रहने की चेतावनी के अलावा दो माह का साधारण कारावास भुगतना होगा।

(27) अब, हम अवमाननाकर्ता संख्या 3 से 5 के मामलों पर आते हैं: अर्थात्, सर्वश्री कैप्टन अभिमन्यु सिंधु, बलराज अरोड़ा और अक्षय मुकुल। जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, उनके मामले द ट्रिब्यून के संपादक के मामले के समान हैं जो ए.जे. में पूर्ण पीठ के समक्ष आये थे। फिलिप का मामला (सुप्रा)। श्री ए.जे. फिलिप, संपादक और श्री राजमित सिंह, संवाददाता को न्यायालय की अवमानना करने का दोषी ठहराया गया। हालाँकि, दो अवमाननाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत की गई बिना शर्त माफी के मद्देनजर सजा के सवाल पर विचार करते हुए, 12 जनवरी, 2004 के अपने आदेश के तहत, पूर्ण पीठ ने निम्नानुसार कहा था: -

> "कानून ऐसे मामलों में न्यायालय को व्यापक विवेकाधिकार प्रदान करता है। बेशक, विवेक का प्रयोग अनिवार्य रूप से क्षेत्र को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों के अनुरूप किया जाना चाहिए। प्रेस केवल प्रचार का साधन नहीं है, दुर्भावनापूर्ण तो बिल्कुल भी नहीं। यह एक ऐसा क्षेत्र है जो बड़े पैमाने पर समाज को शिक्षा और चरित्र भी प्रदान करता है। झूठी खबरें फैलाकर सनसनी पैदा करने के प्रलोभन पर काबू पाना होगा। इसे हमेशा के लिए द्वेष, ईर्ष्या और बुरी इच्छाओं पर आधारित असुरक्षित उत्साह की रिपोर्टिंग को त्याग देना चाहिए। ऐसी स्थिति में कानून का कर्तव्य दया दिखाने के बजाय दोषियों को दंडित करने की मांग करेगा। न्यायालय के समक्ष उत्तरदाताओं के आचरण को ध्यान में रखते हुए स्वामी विवेकानन्द ने जो कहा उसका संदर्भ उपयोगी रूप से दिया जा सकता है:-
>
> शक्ति और दया
>
> मनुष्य के आचरण का मार्गदर्शन करते हैं।
>
> शक्ति का प्रयोग सदैव स्वार्थ का ही प्रयोग है।
>
> दया का अभ्यास स्वर्गीय है.
>
> उपरोक्त समाचार अवमाननाकर्ता के अनियमित रवैये को दर्शाता है, जिसने तथ्यों की पुष्टि किए बिना और कथित तौर पर उसे जानकारी देने वाले स्रोतों की प्रामाणिकता का आकलन किए बिना समाचार प्रकाशित किया, जिससे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि कार्रवाई गलत थी। एक पत्रकार की ज़िम्मेदारी, विशेष रूप से, कानूनी पत्रकारिता के क्षेत्र से, उस पर जिम्मेदारी डालती है। एक पत्रकार द्वारा किया गया उच्छृंखल आचरण संस्थान को अपूरणीय क्षति पहुंचाने के अलावा समाचार पत्रों के लिए भी गंभीर शर्मिंदगी का कारण बनेगा। वाक्पटुता की कोई भी सीमा ऐसी गैर-जिम्मेदाराना रिपोर्टिंग को उचित नहीं ठहरा सकती। सद्भाव और संतुलन का सिद्धांत, किसी भी कानूनी प्रणाली में अपने अस्तित्व से ही, ऐसे व्यवहार को अपवाद बनाता है। इस तरह की रिपोर्टिंग पत्रकारिता का कदाचार नहीं बल्कि गंभीर अपराध है। इसके प्रतिकूल प्रभाव और परिणामों को स्पष्ट रूप से और स्पष्ट रूप से दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है, एक जो सिस्टम और संबंधित व्यक्ति को स्थायी रूप से प्रभावित करता है और समय बीतने के साथ दूर होने की संभावना है, जबकि दूसरा संस्थान और न्याय प्रशासन को होने वाली स्थायी क्षति है। . यह आचरण सामान्यतः अक्षम्य होगा. ये गंभीर अवमाननापूर्ण कृत्य, वह भी इतनी गंभीर प्रकृति के, न्यायालय के पास शायद ही कोई विकल्प बचेगा। फिर भी न्याय के हित में अवमाननाकर्ताओं द्वारा दी गई माफी के परिणामों पर विचार करने और न्यायिक उदारता के उच्च मानकों को बनाए रखने के लिए न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर कोई प्रतिबंध नहीं है।
>
> उपरोक्त प्रतिपादित सिद्धांत 'संस्थागत सहिष्णुता' को इंगित करते हैं जो न्यायपालिका जनता के व्यापक हित और न्याय प्रशासन में रखती है। कानून की महिमा को बनाए रखना न्याय की धुरी है। क्यूरियो, ऐसे मामले हैं जहां न्यायालय के लिए दंडात्मक क़ानून का सहारा लेना अपरिहार्य होगा। ऐसे मामले जहां अवमाननाकर्ता को दंडित करना आवश्यक है, उन्हें अलग-अलग घोषणाओं द्वारा स्पष्ट रूप से समझाया गया है और इस प्रकार, उन्हें उनके सही परिप्रेक्ष्य और संस्थागत हित में समझा जाना चाहिए। एक कारक जो कुछ हद तक संतुलन को अवमाननाकर्ता के पक्ष में झुकाता है वह यह है कि अखबार द्वारा अगले ही अंक में एक स्पष्टीकरण जारी किया गया था। उनके मुताबिक यह खबर अखबार के बाद के संस्करणों

में भी प्रकाशित नहीं हुई. इन अवमाननाकर्ताओं ने पहले उपलब्ध अवसर पर ही न्यायालय के समक्ष अयोग्य माफी मांगी और किसी भी समय गलत और गैर-जिम्मेदाराना कृत्य को उचित ठहराने का प्रयास भी नहीं किया।

अब हम उपरोक्त सिद्धांतों के आलोक में इस मामले पर विचार करेंगे ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि भविष्य में उत्तरदाताओं द्वारा ऐसी आधारहीन और अवांछनीय खबरें रिपोर्ट न की जाएं। हम श्री ए.जे. फिलिप और श्री राज सिंह की ओर से दी गई अयोग्य और बिना शर्त माफी स्वीकार करने के इच्छुक होंगे, लेकिन उन्हें एक विशिष्ट हलफनामा दाखिल करना होगा कि उनके प्रबंधन द्वारा लिए गए निर्णयों के अलावा, वे पत्रकारिता के निर्धारित मानकों का सख्ती से पालन करेंगे और अदालत को इस तरह के आचरण को दोबारा न दोहराने का आश्वासन देंगे, भविष्य में किसी भी परिस्थिति में।

पुनरावृत्ति की कीमत पर और जैसा कि यह हमारे लिए अपरिहार्य है, हम 19 सितंबर, 2003 के अपने फैसले और आदेश में हमारे द्वारा निकाले गए निष्कर्षों पर फिर से जोर देते हैं: -

".....यह काफी दुर्भाग्यपूर्ण है कि एक समाचार पत्र ने एक सदी से भी अधिक समय से प्रतिष्ठित और जिसने समुदाय के लिए तुर्कों की तरह सेवा की है और सार्वजनिक हित के प्रहरी के रूप में काम किया है, वह उन लोगों के लिए खेल का मैदान बन गया है, जिनके मन में दूसरों की गरिमा के प्रति सम्मान नहीं है और जो ऐसा करने में संकोच नहीं करते हैं। न्यायपालिका सहित संवैधानिक संस्थानों को बदनाम करें और इसकी निष्पक्षता और अखंडता में लोगों के विश्वास को हिलाएं।"

हम उत्तरदाताओं को उनके सार्वजनिक दायित्व के आयामों को किसी भी बेहतर तरीके से याद नहीं दिला सकते थे। हम आशा व्यक्त करते हैं कि उत्तरदाता अपने कद को ध्यान में रखते हुए पत्रकारिता के उच्च मानकों का पालन सुनिश्चित करेंगे। व्यापक सार्वजनिक हित उन पर सभी प्रभावित पक्षों की गरिमा बनाए रखने को सुनिश्चित करने के लिए ईमानदारी से रिपोर्टिंग करने का दायित्व डालता है।

xxxxxxxxx

इन सबके बावजूद, हम उत्तरदाताओं को निर्देश देते हैं, जो बड़े पैमाने पर द ट्रिब्यून और कानूनी पत्रकारिता जैसे समाचार पत्रों के मुद्रण, प्रकाशन और प्रसार के लिए वैधानिक और अन्यथा जिम्मेदार हैं, निम्नलिखित दिशानिर्देशों-निर्देशों का पालन करें और निवारक और सुधारात्मक कदम उठाएं ताकि पत्रकारिता के उच्च नैतिक मानक बनाए रखें और न्याय प्रशासन में हस्तक्षेप न करें और न्यायपालिका की संवैधानिक संस्थाओं की गरिमा को कम न करें।

1. पत्रकार को अधिक जिम्मेदारी सौंपी जाती है कि वह जो कहता है या लिखता है, उसका आम नागरिक द्वारा कही गई बात की तुलना में जनता पर अधिक हद तक प्रभाव पड़ने की संभावना होती है। इस प्रकार, उसे वास्तविक समाचार के प्रति पूरी तरह से तथ्यात्मक और सही होना चाहिए।

2. समाचार के ईमानदार संग्रह और प्रकाशन का आधार निष्पक्ष टिप्पणी और आलोचना का अधिकार है, इस सिद्धांत के अपवाद के साथ कि किसी पत्रकार के लिए न्यायिक प्रशासन संस्थान सहित किसी एक पर मकसद थोपना या थोपना आशंकित है। न्याय प्रशासन या न्यायिक प्रशासन के कार्य के संबंध में कोई भी समाचार या लेख प्रकाशित होने से पहले, संबंधित तिमाही को यह सुनिश्चित करना होगा कि जानकारी तथ्यात्मक रूप से सटीक है। तथ्यों को विकृत नहीं किया जाता और किसी भी आवश्यक तथ्य को दबाया नहीं जाता।

3. प्रकाशित सभी सूचनाओं और टिप्पणियों के लिए जिम्मेदारी मानी जाएगी। यदि जिम्मेदारी से इनकार किया जाता है, तो इसे प्रकाशन से पहले स्पष्ट रूप से बताया जाएगा। अदालतों की कार्यवाही को गलत तरीके से प्रस्तुत नहीं किया जाता है। स्थापित प्रशासन का कहना है कि इस तथ्य के बावजूद कि मुकदमा सार्वजनिक है और उनकी कार्यवाही का प्रचार किया जा सकता है, लेकिन समाचार पत्रों के प्रकाशन में

सत्य और सटीक बयान होना चाहिए और दुर्भावना या अदालतों या न्यायाधीशों को बदनाम करने के प्रयास से रहित होना चाहिए।

4. कानूनी पत्रकारिता से संबंधित समाचारों और लेखों की सत्यता की जांच के लिए एक अंतर्निहित तंत्र प्रदान करने के लिए तत्काल कदम उठाए जाएं और कम से कम अपने व्यवसाय के सामान्य पाठ्यक्रम में प्रकाशन के स्रोतों की प्रामाणिकता सुनिश्चित की जाए।

कानूनी पत्रकारिता को जिस कठिन कर्तव्य, दायित्व और व्यापक दायित्व का पालन करना चाहिए, उसका उल्लेख हमने ऊपर किया है। अब के उत्तरदाताओं और इसके पूर्व संपादक को, पहले भी, न्यायालय की अवमानना का दोषी पाया गया था और इस प्रकार, उन पर और इसके प्रबंधन पर इस तरह की पुनरावृत्ति की पूर्ण रोकथाम सुनिश्चित करने के लिए बिना किसी चूक के ऐसे सभी उपाय करने का भारी बोझ है। गरिमापूर्ण पत्रकारिता के उपरोक्त उल्लिखित मानदंड, विशेष रूप से न्यायपालिका जैसी संवैधानिक संस्था के संदर्भ में, संपूर्ण नहीं हैं, बल्कि प्रेस पर डाली गई महती जिम्मेदारी का संकेत मात्र हैं, जिसका सार्वजनिक हित में सही रिपोर्टिंग का पवित्र कर्तव्य है। ये मानक और प्रतिबंध मोटे तौर पर बताते हैं कि कानून के कागजात के प्रकाशकों से क्या अपेक्षा की जाती है। बेशक, उसका अनुपालन अवमानना की कार्रवाई में पूर्ण बचाव नहीं हो सकता, क्योंकि यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा। हालाँकि, उनका अनुपालन निश्चित रूप से न्याय के उचित प्रशासन में हस्तक्षेप को रोकेगा और अपराध की गंभीरता को कुछ हद तक कम करेगा। कानून लागू करने के मामले में पत्रकारों की स्वतंत्रता एक व्यक्तिगत नागरिक की तुलना में बेहतर स्तर पर नहीं है। इसके विपरीत, अखबार के संपादक और प्रबंधन पर मामलों की रिपोर्टिंग में सावधानी और सावधानी बरतने की एक बड़ी जिम्मेदारी डाली गई है।

xxxxxxxxx

हम श्री ए.जे. फिलिप, संपादक, और श्री राजमीत सिंह, रिपोर्टर, द्वारा दी गई बिना शर्त और अयोग्य माफी स्वीकार करते हैं। लेकिन इस शर्त के अधीन कि शपथपत्र, जैसा कि ऊपर निर्देशित किया गया है, दिन के दौरान उनके द्वारा दायर किया जाएगा।

(28) तीनों अवमाननाकर्ताओं ने वास्तव में शुरुआत में ही बिना शर्त माफी मांगी है। हालाँकि, उन्होंने अपनी कार्रवाई को सही ठहराने का भी प्रयास किया। इस प्रकार, हमारा विचार है कि वे उन्होंने स्वयं को पूरी तरह से अवमानना से मुक्त नहीं किया है। हालाँकि, मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, विशेष रूप से शुरुआत में ही अयोग्य माफी मांगी गई है, हम ए.जे. फिलिप (सुप्रा) के मामले में पूर्ण पीठ के फैसले के संदर्भ में उनकी बिना शर्त और अयोग्य माफी स्वीकार करने के इच्छुक हैं, समान शर्तों के अधीन। इस प्रकार, तीनों अवमाननाकर्ताओं को भी समान शर्तों पर अपने हलफनामे प्रस्तुत करने होंगे।

(29) अवमाननाकर्ता संख्या 3 से 5 को जारी किए गए नियम पूर्ण बनाए गए हैं।

आर.एन.आर.

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

हार्दिक सचदेवा

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

पोस्टिंग का स्थान: भिवानी

Hardik Sachdeva

Trainee Judicial Officer

Place of Posting: Bhiwani